REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 10 | ISSUE - 4 | JANUARY - 2021

चित्रकला के टेम्परा तकनीक

Kashinath D.W.
Lecturer, Dept. of Studies in Visual Art,
Gulbarga University, Kalburgi.

सारांशः:

कला का आरम्भ मानव जीवन के आरम्भ से होता है। प्रारम्भ में मानव के पास जब कोई साधन नहीं था तो सर्वप्रथम उसने भित्ति को ही अपने भाव व्यक्त करने का आधार बनाया। जिसके उदाहरण प्रागैतिहासिक कालीन मध्य प्रदेश की गुफाओं से आरम्भ होकर अजन्ता, राजस्थान तक जाते हैं। यूँ तो सम्पूर्ण राजस्थान में एक ही तकनीक द्वारा भित्ति पर चित्रांकन किया गया हैं, तथापि स्थानीय अंतर परिलक्षित होता है। अभिव्यक्ति का सबसे सरल व पुराना माध्यम भित्ति चित्र रहें हैं। साधारण शब्दों में "भित्ति पर सौन्दर्य एवं सृजन की दृष्टि से किया गया अलंकरण भित्ति चित्रण कहलाता हैं।श्श षभित्ति चित्रष का अर्थ– दीवारों पर की जाने वाली चित्रकारी। यह चित्रकारी टेम्परा रंग, तैल रंग या खनिज रंगों की सहायता से विभिन्न विधियों द्वारा होती हैं।

परिचयः

प्रागैतिहासिक कालीन भित्ति चित्रों में आखेट के दृश्यों को मुख्य रूप से चित्रित किया गया है। इसके अतिरिक्त प्राकृतिक आपदाओं से भयभीत होकर तथा अपनी विजय के इतिहास को व्यक्त करने के उद्देश्य से उस समय चित्रों को चित्रित किया गया। इन आरम्भिक भित्ति चित्रों को बनाने के लिए भित्ति को तैयार नहीं किया जाता था बल्कि सीधे ही रंगों को ऊँगलियों, रेशेदार लकड़ी या बाँस को कूचकर लगाया जाता था। चित्रों को चट्टानों की दीवारों, गुफाओं के फर्शो तथा छतों में बनाया गया हैं। धीरे–धीरे मानव धरातल को चित्रण के लिये चिकना करने लगा। धरातल चिकना करने के लिए उन्हें अथक परिश्रम करना पड़ता था फिर भी वह भित्ति खुरदुरी रहती थी। इन चट्टानों की खुरदुरी दीवारों पर लाल, काले, सफेद, रंगों द्वारा चित्र बनाये गये थे। इन रंगों का निर्माण प्राकृतिक वस्तुओं द्वारा किया गया था जैसे– गेरू, रामरज, हिरौंजी, कोयला, चूना तथा खड़िया। इन रंगों को पशु की चर्बी में मिलाकर प्रयोग करते थे। इससे रंगों में चमक तथा स्थायित्व आता था। वानस्पतिक रंगों को भी वे तैयार करते थे। तूलिका के लिए चित्रकार किसी रेशेदार लकड़ी, बाँस आदि के एक सिरे को कूचकर बनाता था तथा आकृति की सीमा रेखा को किसी नुकीले पत्थर से खोदकर बनाया जाता था जिससे वह वर्षा के जल से धुल न जाये। धीरे–धीरे भित्ति चित्रण विधि में सुधार हुआ। भारतीय चित्रकला के स्वर्णिम इतिहास के उदाहरण अजन्ता में (टम्परा विधि) भित्ति चित्रण का उत्तम एवं सफल प्रयोग हुआ है। वहाँ भगवान बुद्ध के जीवन से सम्बन्धित घटनाओं को मूर्ति तथा चित्रों के रूप में उकेरा गया है। चट्टानों पर प्राकृतिक रंगों द्वारा सुंदर चित्रण हुआ है।

भित्ति चित्रण तकनीक का वर्णन 'विष्णुधर्मोत्तर पुराण' के एक भाग "चित्रसूत्रष में भी देखने को मिलता है। विष्णुधर्मोत्तर पुराण के अनुसार भित्ति पर चूने के साथ कोई लेसदार पदार्थ मिलाकर तीन परते प्राइमिंग की

लगानी चाहिए। 'मानसोल्लासष के अनुसार–' लेस के साथ सफेद मिट्टी मिलाकर तीन अस्तर लगाने चाहिए। फूंका हुआ शंख तथा नीलगिरि से प्राप्त मिट्टी भी सफेद मिट्टी की भाँति प्रयोग की जा सकती है।श्श चित्रसूत्र के भित्ति चित्रों के निर्माण की विधि भी ढूँढाइ के भित्ति चित्रों के निर्माण विधि के लगभग समान ही बतायी गयी है। चित्रसूत्र के अनुसार

तीन प्रकार की ईटों के चूर्ण में, एक तिहाई मिट्टी डालकर गुग्गुल, मोम, महुआ मूर्वा, गुड़, कुसुम का फूल तथा इन सबके बराबर तेल मिलायें। फिर उसमें बुद्धिमान् व्यक्ति आग पर पकाया हुआ एक तिहाई चूना, दो अंश बेल का गूदा, मषक (मसी), कष (खैर) और तद्नुरूप बालू का अंश मिलाये। तदनंतर चिकनी छाल के पात्र में रखे हुए पानी में उस मिश्रित पदार्थ को एक मास तक भिगोये। एक महीने में वह मिश्रित पदार्थ कोमल हो जाता है। तब उसको सावधानी से निकाल कर सूखी दीवार पर लेप करें। लेप चिकना हो, नम हो, दृढ़ हो और ऊबड़ खाबड़ न हो। वह बहुत मोटा या बहुत पतला भी नहीं होना चाहिए।

उससे बार–बार लीपी हुई दीवार जब सूख जाये तब तेल, मिट्टी और चूने के मिश्रण से तैयार किये हए लेपों एवं चिकने मंजनों से दीवार पर सावधानी से वार्निश करें। उसके बाद अनन्तर बार–बार दूध से सींच कर तुरन्त यत्नपूर्वक पोछकर दीवार को सुखा डालें। इसी प्रकार दो तरह के रंगों वाले लेपों से युक्त अनेक मणिमय भूमियाँ चित्र की आकृति के अनुसार कल्पित करें।

दीवार के सूख जाने पर प्रशस्त तिथि एवं शुभ नक्षत्र में या विशेषकर चित्रानक्षत्र में श्वेत वस्त्र धारण कर संयमी होकर ब्राह्मणों का पूजन करें। फिर स्वस्तिवाचन करके चित्र कलाविदो तथा गुरू को, गुरुभक्त चित्रकार प्रणाम करें। पूरब मुँह होकर, इष्टदेव का ध्यान करके चित्र बनाना प्रारंभ करें। उजली, गहरे पीले रंग की तथा काली तूलिकाओं से क्रमशः पूर्वोक्त प्रमाण एवं स्थान के अनुसार चित्र लिखे।

श्री इकबाल बहादुर देवसरे ने अपनी पुस्तक 'भारतीय चित्रकला' में विविध खण्ड में 'चित्र मीमांसा' में भित्ति चित्रण तकनीक का वर्णन किया है। दीवार पर चित्रांकन के पहले उसको स्थित और दृढ़ बनाने के लिए उस पर प्लास्टर किया जाता है। प्लास्टर दो प्रकार के होते हैं, जो एक के पश्चात् एक प्रयोग में लाये जाते हैं।

- **प्रथम प्लास्टरः**

ईटों का चूर्ण एक भाग, चूर्ण का 1/3 भाग चिकनी मिट्टी, अलसी का तेल, साल का गोंद, मोम, रूमी मस्तगी और गुड़ सब सम भाग। हरे के छिलकों की जली हुई राख 1/3 भाग। सब मिली वस्तुओं का आधा भाग बेल का चिपकता हुआ गूदा और कुल मिले हुये पलस्तर का चौथाई भाग बालू। उपर्युक्त सब वस्तुओं को उरद की दाल के पीठी के पानी में घोलकर एक मास तक सुरक्षित रखना चाहिये। एक मास पश्चात् घोल के गाढ़ा हो जाने पर उसका प्रयोग दीवार पर करना उचित होता है। इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि घोल इतना गाढ़ा न हो जाये कि दीवार पर उसकी छपाई सरलता से न हो सके। दीवार पर प्रयोग करने के पश्चात जब पलस्तर सूख जाये तो साल का गोंद और अलसी के तेल का पोत करके काँच आदि किसी चिकनी वस्तु से रगड़ कर दीवार को चिकना बना लिया जाये। यदि कई बार गोद और तेल का प्रयोग किया जाये तो पलस्तर चिकना होने के अतिरिक्त अधिक दृढ़ हो जायेगा और हजारों वर्ष तक उसके बिगड़ने की सम्भावना जाती रहेगी। अजन्ता आदि गुफाओं की दीवारों पर इसी पलस्तर का प्रयोग किया गया है।

- **द्वितीय प्लास्टरः**

शंख जो नदियों में अधिक मिलता है, आवश्यकतानुसार जलाकर उसका चूना बना लिया जाये। चूने का 1/4 भाग गुड़ का शीरा, 1/4 भाग महीन रेत और 1/4 भाग पके हुये केलों का गूदा मिलाकर, उरद की दाल के काढ़े में भिगोकर, लकड़ी के बर्तन में तीन मास तक सुरक्षित रखा जाये। बीच–बीच में उसे बराबर हिलाते रहे। तीन मास बाद निकालकर और गुड़ के शीरे के साथ इतना पीसा जाये कि समस्त पलस्तर मक्खन के समान कोमल हो जाये। जिस दीवार पर प्रथम पलस्तर का व्यवहार किया जा चुका हो, उस पर नारियल वृक्ष के लकड़ी की कूँची बनाकर गुड़ के शीरे का हल्का पोत करके बारह घंटे तक दीवार को सूखने दें। तत्पश्चात् तैयार किया हुआ द्वितीय पलस्तर लगाया जाये।

प्लास्टर लगाने के कुछ समय पश्चात् किसी उचित वस्तु से उसे बराबर करके नारियल की कूँची द्वारा शुद्ध पानी का पोत करना चाहिये। सूख जाने पर केरबाल–फल के रस से दीवार को सींच कर केवड़े (केतकी)

के पत्तों से घोटना चाहिये। जिससे पलस्तर पर चमक उत्पन्न हो जाये। इस पलस्तर की हुई दीवार पर चित्रलिपि अंकित करके वर्ण–विन्यास करना चाहिये। प्लास्टर पर चित्रलिपि अंकित करने के लिये वर्तिका की भी आवश्यकता होती है। अतएव पुराने कोयले का चूर्ण एक भाग, गाय के सूखे गोबर का चूर्ण चौथाई भाग–दोनों को मिलाकर तुलसीदल के रस में खरल करके, लेई सी बन जाने पर उसकी वर्तिका बना ली जाये और साये में सुखाकर उसके द्वारा चित्रलिपि अंकित की जाये। यदि कहीं पर कोई रेखा मिटाने की आवश्यकता हो तो उसे कपड़े से रगड़ देना चाहिये।

टेम्परा तकनीकः

टेम्परा विधि द्वारा शुष्क दीवार पर चित्रण कार्य किया जाता है। टेम्परा विधि की शुरूआत यूँ तो प्रागैतिहासिक काल से हुई, किन्तु इसका पूर्ण विकसित रूप हमें अजन्ता के चित्रों में देखने को मिलता है। टेम्परा विधि में पहले भित्ति को चित्रण योग्य तैयार किया जाता है, फिर भित्ति सूख जाने के उपरान्त उस पर रंगों के माध्यम से चित्रण किया जाता है। टेम्परा में विभिन्न माध्यमों द्वारा रंग भरे जा सकते हैं।

भित्ति बनाने का तरीकाः

साल भर बाद चूने को पानी के साथ एक कपड़े से छानकर अलग कर देते हैं। फिर जिस दीवार पर काम करना है, उस पर बनायी जाने वाली पेंटिग की नाप में दीवार पर निशान लगा लिया जाता है। उस हिस्से की दीवार पर के चूने की ऊपरी परत को पत्थर से तोड़कर गिरा देते हैं और दीवार को पानी पिलाने या डालने के लिए नीचे एक मेढ़ बना देते हैं ताकि बार–बार दीवार में पानी डालने पर हर बार पानी वहीं इक्ट्ठा हो जाये। (दीवार चूने की होनी चाहिए यदि दीवार केवल ईट की हो तो उसमें मसाला लगाकर तब उस पर चित्र बनाया जाता है। अगर दीवार सीमेंट की हो तो उसका सीमेंट तोड़कर फिर उस दीवार पर बराबर भाग का मसाला लगाकर पहले दीवार तैयार करते हैं, फिर काम करते है।)

साधारण बिना छने चूने को 3:1 के अनुपात में (चूना एक हिस्सा तथा संगमरमर के चूर्ण का तीन हिस्सा लेते हैं यह चूना भी साल भर पहले या दो–तीन महीने पहले भीगा होना चाहिए, नहीं तो दीवार चूने की गर्मी से चटक जायेगी।) संगमरमर के चूर्ण के साथ मिश्रित कर श्करनीश (कन्नी) से अच्छे से रगड़ते हैं। ताकि चूने के दाने समाप्त हो जायें, फिर जमीन साफ करके उस मिश्रण को जमीन पर लोढ़े की मदद से खूब रगड़–रगड़ कर पीसते हैं। उसमें एक भी दाना सा न रह जाये। पीसते समय आवश्यकता पड़ने पर पानी भी दो–चार बूंद मिलाते जाते हैं अगर उसे थोड़ी देर के लिए छोड़ना हो तो उसमें इतना पानी भरकर रखें ताकि वो मिश्रण पानी में डूबा रहे। चूने और संगमरमर के चूर्ण को इस तरह बारीक पीसने से इसमें लस उत्पन्न हो जाता है, जिससे बाद में चमक व मजबूती आती है। उसके बाद तोड़ी हुई दीवार पर खूब पानी डालते हैं। यह पानी पूँज की कूची से डालते है, दिखें चित्र सं0 11) स्प्रे बोतल से भी पानी डाल सकते हैं किन्तु ट्यूब की धार से सीधे पानी नहीं डालते, अगर बहुत बड़ी जगह पर कार्य करना हो तभी ट्यूब से पानी डालते हैं। दीवार पर पानी लगभग एक–दो घंटे तक लगातार डालते हैं और इतना डालते हैं कि दीवार पर हाथ रखें तो हाथ गीला हो जाये। पानी को दीवार पर कूँची की सहायता से फेंक–फेंक कर या चुआकर ही डालना होता है। इससे दीवार के ऊपर का थोड़ा बहुत अतिरिक्त मसाला भी बह जाता है।

पूरी दीवार अच्छे से गीली हो जाने के बाद उस पर करनी की सहायता से चूने और संगमरमर के चूर्ण का 3:1 अनुपात का मिश्रण लगाते हैं और बटकड़े की सहायता से उसे चिकना करते है। दिखें चित्र सूची संख्या–12) स्केल (पटरी) की सहायता से दीवार की सतह और लगाये गये मसाले की सतह नापते हैं। दोनों एक बराबर होनी चाहिए (दीवार नापने का स्केल श्श आकार का होता हैं। जिसे श्गुनियाश कहते हैं।) मसाले को दीवार पर थोड़ा–थोड़ा करके लगाना चाहिए वरना मसाला अच्छा नहीं लगेगा और सूखने लगेगा। मसाला लगाने के बाद पूँज की पूची से पानी डालकर देखते हैं कि मसाला सब जगह बराबर लगा है, कहीं भी हल्का सा भी छेद या जगह छूटी न हो। फिर मसाले को चिकना करके छोड़ देते हैं। इस मसाले को बनाने की पूरी विधि में सफाई का बहुत ध्यान दिया जाता है। करीब दो, तीन दिन तक हर थोड़ी देर पर दीवार को भिगोया जाता है और तब तक भिगोया जाता है जब तक कि दिवार अच्छी तरह भींग न जाये। ऐसा करने से दीवार मजबूत होती है और मसाला भी दीवार को अच्छे से पकड़ लेता है।

टेम्परा विधि द्वारा चित्रण की विधि :

टेम्परा तकनीक में जो टाईल या दीवार तैयार करते हैं, संगमरमर के चूर्ण तथा चूने की (खुरदुरे या रफ मसाले की), उसके ऊपर सीधे ही कार्य किया जाता है। टेम्परा तकनीक के लिये दीवार या टाईल चिकनी न होकर हल्की खुरदुरी होनी चाहिए। मारबल णउडर और चूने के अलावा ईट चूर्ण और चूने के मसाले को लगाकर उस पर भी चित्रण कार्य किया जा सकता है। ये ईट और चूने के मसाले को 3रू1 के अनुपात में टाईल के पिछले हिस्से यानि काली सीमेंट पर लगाकर भी कार्य किया जा सकता है, नहीं तो सीधी तरफ जहाँ मारबल पाउडर और चूना लगा है, वहाँ पर सीधे ही कार्य कर सकते हैं। दीवार को जो पहले मसाला बनाकर लगाते हैं, उसके बाद उसे दो–तीन दिन तक अच्छे से पानी से भिगोते हैं। दीवार तैयार होने के बाद, सूखने के बाद उस पर रंग करते हैं। अब हमें जो भी रंग करना हैं, उसके लिये बबूल के गोंद को पानी में घिस लेगें, फिर उसमें रंग मिला लेगें। पेपर में रंग लगाकर देख लेंगे कि रंग छूटता तो नहीं है, यदि छूटे तो उसमें और गोंद मिला दिया जायेगा, नहीं तरह के चित्रण में नैला, अकीक पत्थर आदि सामग्रियों की आवश्यकता नहीं होती है। रंग करने के बाद उसे सूखा देंगे। इस प्रकार टाईल या दीवार तैयार हो जाती है।

ऐग टेम्परा तकनीकः

ऐग टेम्परा तकनीक यूरोप में काफी समय से प्रचलित रही है और इसका ज्ञान हमको वहीं की कला से प्राप्त होता है। पश्चिम के कलाकार–मिसी, रोमन तथा यूनानी कलाकार। ये सभी टेम्परा चित्रकला की सभी सामग्रियों से परिचित थे लेकिन आज जो माध्यम हम ऐग टेम्परा के लिए प्रयुक्त करते हैं, उसे सर्वप्रथम बाइजेन्टाइन के कलाकारों ने प्रयुक्त किया था। लेकिन इस विधि को वे बहुत अपरिष्कृत रूप से प्रयुक्त करते थे। ऐग टेम्परा विधि मध्यकाल में अपने शीर्ष पर पहुँची। जबकि पैनल चित्रण के लिए प्राथमिक रूप से इस विधि को प्रयोग किया गया था। मध्यकाल के उत्तरार्द्ध तथा पुर्नजागरणकाल के चित्रकार ज्योतो, मार्तिनी, ड्यूको तथा बोत्तिचेली इस विधि का प्रयोग करते थे। ऐग टेम्परा तकनीक का यह विवरण मुझे एक पुस्तक से प्राप्त हुआ. जिसका आवरण इत्यादि सब कुछ गायब था। जिसके कारण पुस्तक तथा लेखक का नाम जानना असम्भव हो गया।

यदि इसको दो, तीन दिन तक रखना हो तो इसमें लौंग का तेल डाल कर रखेंगे ताकि इसमें कीड़े न पड़ें। अच्छे से फिट जाने के बाद इसे रंग के साथ आवश्यकतानुसार मिलाकर प्रयुक्त करते हैं। जिस प्रकार जल रंग में रंग के पाउडर के साथ पानी मिलाते हैं, उसी प्रकार इस विधि में रंग के पाउडर में अण्डे का बना यह मिश्रण मिलाकर प्रयोग करते हैं। मैंने इस विधि का ज्ञान, वहाँ भित्ति चित्रण शिक्षा प्राप्त करने आये "श्री के. श्रीनिवास चारी" जी से प्राप्त की।

टेम्परा चित्र समय के साथ तैल चित्रों की तरह न ही पीले पड़ते हैं न ही धुंधले होते हैं। इस विधि में पानी चित्र से पूर्ण रूप से वाष्पित भी हो जाता है। तैल चित्रण में रंग, तेल की वजह से चटक जाते हैं, किन्तु टेम्परा में ऐसा नहीं होता हैं, अगर वह सही तरीके से बने हो। यदि चित्रण में कोई त्रुटि भी हुई है, जिसकी वजह से उस चित्र में दरार भी पड़ सकती है, तो वह चित्र के सूखने के तुरन्त बाद ही दिखायी पड़ने लगती है।

पहले टेम्परा के लिए जो माध्यम प्रयुक्त होता था वह पूर्णतया प्राकृतिक था। जिसमें मुर्गी के अंडे का पीला हिस्सा जिसे "ल्वसा" कहते हैं, प्रयुक्त होता था। तैलीय टेम्परा में पानी के स्थान पर मोम, वार्निश और तेल प्रयुक्त होता था। यह तकनीकें इटालियन चित्रकारों द्वारा प्रयुक्त की गयी हैं।

ऐग टेम्परा तकनीक में पहले अण्डे के पीले हिस्से को अलग कर लिया जाता है। अण्डे का सफेद भाग रंग को तेजी से सुखा देगा, जिससे कार्य करना मुश्किल हो जाता है, इसलिए सिर्फ पीला हिस्सा ही प्रयोग किया जाता है। अण्डे के पीले हिस्से की झिल्ली हटाने के लिये पीले हिस्से को हथेली पर रख कर दूसरे हाथ के अँगूठे और उसके बगल वाली ऊँगली से अण्डे के पीले हिस्से की झिल्ली को पकड़ लेते हैं, लेकिन यह कार्य सावधानी से करते हैं, ताकि झिल्ली फटने न पाये, फिर उसे बर्तन के ऊपर रखकर नीचे से झिल्ली चाकू से काट देते हैं। इस प्रकार अन्दर से सारा पीला हिस्सा उस बर्तन में गिर जायेगा। कुछ चित्रकार अण्डे को फोड़कर अण्डे के सफेद हिस्से को पहले अलग कर लेते हैं, फिर अण्डे के पीले हिस्से की झिल्ली को काटकर

उसे दूसरे बर्तन में गिरा लेते हैं। इस विधि से अण्डे का पीला हिस्सा उतनी सफाई से नहीं निकल पाता। इसमें अण्डे का सफेद हिस्सा भी शामिल हो ही जाता है।

इसके बाद रंग को साफ पानी के साथ खूब अच्छे से घोंटकर एक अच्छे से बन्द डिब्बी में रख लेते हैं। रंग में इतना पानी मिलाते हैं, कि रंग ट्यूब वाले रंग के समान गाढ़ा रहे। इस्तेमाल करने से तुरन्त पहले इस रंग के मिश्रण और अण्डे के पीले हिस्से को बराबर मात्रा में लेकर मिला लेते हैं। रंग को सीधे ही अण्डे में भी मिलाया जा सकता है। जब रंग का कार्य खत्म हो जाये तो अण्डे मिश्रित रंग को खुला नहीं छोड़ना चाहिए, उसे अच्छे से बन्द डिब्बी में रखना चाहिए, नहीं तो यह मिश्रण कड़ा हो जायेगा। अगर डिब्बी में अच्छा ढक्कन नहीं है तो उस डिब्बी को गीले कपड़े से बन्द करके रखना चाहिए। उत्तम यह है कि अण्डे में कोई भी प्रिजरवेटिव नहीं मिलाया जाये और उसे ठंडी तथा अंधेरी जगह पर रखा जाये। ऐसा तीन चार दिन तक किया जा सकता है। इसे फ्रिज में भी रख सकते हैं, किन्तु फ्रिजर में नहीं। यदि इससे लम्बे समय तक रखना जरूरी हो तो इसमें 10 प्रतिषत फीनॉल (कार्बोलिक एसिड) डाला जा सकता है, 3 प्रतिषत से कम की मात्रा में एसिटिक एसिड डाला जा सकता है। पारम्परिक विधि में इसमें अण्डे के साथ सिरका मिलाया जाता है। ज्यादातर सिरकों में 3 से 5 प्रतिशत एसिटिक एसिड होता है और एसिड भित्ति के सफेद भाग को, नीले रंग को तथा पीले हिस्से को खराब कर सकता है।

इस विधि में बिल्कुल ताजे अण्डे का प्रयोग करना अच्छा रहता है। रखे हुए अण्डे, रंग को कमजोर कर सकते हैं। इस विधि में थोड़ा सा पानी जरूर लेना चाहिए और इस्तेमाल के बाद बुश को तुरन्त पानी में डाल देना चाहिए। पहले रंग को अण्डे में मिलाकर कागज पर लगाकर सुखाकर जाँच लेना चाहिए, अगर रंग कागज में लगा रहता है, छूटता नहीं है तो उसे दीवार पर प्रयोग कर लेना चाहिए।

निष्कर्ष:

समस्त भित्ति चित्रों की विषयवस्तु, सामग्री, रंग–व्यवस्था, भित्ति चित्रण तकनीक आदि को जानने के बाद यह लगता है कि भारत में मुख्यतः भित्ति चित्रण की दो तकनीक प्रचलित रही है। पहली टेम्परा या फ्रेस्को सेको तथा दूसरी फ्रेस्को बूनो, जो विशेषतः राजस्थानी, जयपुर फ्रेस्को तकनीक ही रही है।

टेम्परा में यद्यपि सामग्रियों के विविध प्रयोगों तथा तकनीकों की विविधता के दर्शन होते हैं तथापि वे सब टेम्परा तकनीक के अन्तर्गत ही रखा जा सकती हैं। फ्रेस्को बूनो में भी यही बात दिखलायी पड़ती है। फ्रेस्को ब्रूनो में जयपुर विधि तथा उसमें प्रयुक्त होने वाली सामग्रियों का प्रयोग तो होता ही था, सम्भवतः इटालियन तकनीक के प्रभाव के कारण यहाँ इटालियन तकनीक में प्रयुक्त होने वाली सामग्री को भी देखा जा सकता है। किंतु बाघ गुफा में बालू, चूने का प्रयोग होने के कारण हम इसे इटालियन तकनीक का प्रभाव नहीं मान सकते, क्योंकि यह इटालियन प्रभाव के भारत में आने से काफी पहले की निर्मित गुफा है। प्रागैतिहासिक कालीन गुफा चित्रों के जीवित उदाहरणों को आज देखने से यह पता चलता है, कि इतने हजार वर्ष बीत जाने के बाद ये चित्र आज भी अपने अस्तित्व को समेटे अपने काल की परम्परा संस्कृति तथा उस समय की मानव सभ्यता, उनके रहन–सहन, उनके क्रिया–कलापों आदि का विवरण प्रस्तुत करती हैं। जिनकी जानकारी हमें उस समय के विविध चित्रित विषयों को देखने से प्राप्त होती है। यद्यपि उस समय के चित्र आज के चित्रों की तरह चटख रंगों विविध विषयों तथा तकनीकों से बने नहीं होते थे। तथापि उस समय उपलब्ध सामग्रियों द्वारा बने ये चित्र तत्कालीन मानव सभ्यता का पूर्णतया बखान करते हैं। हालांकि उस समय तो मानव को भाषा का ज्ञान भी नहीं था, तब यह कला उनकी अभिव्यक्ति का एक साधन थी। उस समय मानव ने विषयों के रूप में आखेट, अपने दैनिक क्रियाकलापों, पूजा–पाठ, मनोरंजन आदि को चित्रित किया।

जिसमें वह प्रकृति से डर कर भी कई प्रतीकात्मक रूपों में प्रकृति को चित्रित कर पूजा करता था। जैसे– सूरज, चाँद आदि की। उस समय की उसकी चित्रण तकनीक में वह हाथ की ऊँगलियों द्वारा, घास की तूलिका द्वारा रंग का फूंका लगाकर चित्रण कार्य करता था। वह सीधे ही चट्टान पर बिना किसी प्लास्टर के प्रयोग के प्राकृतिक रंगों को पशु चर्बी से घोलकर लगाता था। उस समय जबकि मानव भाषा का ज्ञान भी नहीं कर पाया था तो ऐसे समय में कला के सीमित साधनों द्वारा ऐसा चित्रण करना, जो आज हजारों साल बाद भी अपना स्थान बनाये हुये है, यह आज के मानव विशेषतः कलाकारों के लिए बहुत गर्व की बात है कि उस समय ही मानव ने रंगों को लगाने की एक दृढ़ तकनीक खोज निकाली थी, जो हजारों साल तक जीवित रह सके।

जिस प्रकार आदि मानव सीधे चट्टान पर चित्रण कार्य करता था उसी प्रकार आज भी कलाकार जब मकान तैयार हो जाता हैं तो उसकी दीवार पर ही सीधे चित्रण कार्य करता हैं। यद्यपि इस हेतु वह आदि मानव की तरह रंगों को पशु चर्बी में मिलाकर या सिर्फ प्राकृतिक रंगों को प्रयोग नहीं करते वह आज के आधुनिक रंगों का भी प्रयोग करते हैं।

संदर्भः

1. नाथूलाल वर्मा, 'आकृति– भित्ति चित्र विशेषांक, लेख– राजस्थानी भित्ति चित्रण तकनीक', पृष्ट संख्या १.
2. रूपनारायण बाथम, 'पारिभाषिक कला कौश', पृष्ट संख्या १६१
3. बद्रीनारायण वर्मा, 'कोटा भित्ती चित्रांकन परंपरा', पृष्ट क्र, ७४
4. आशुतोष दाधीच, 'दुन्धाद की भित्ति चित्रकला का इतिहास', पृष्ट संख्या ६४–६६
5. इकबाल बहादुर देवसरे, 'भारतीय चित्रकला', पृष्ट संख्या ८१–८३